



ISSN: 3049-2017

IJMH 2026; 3(5): 74-79

© 2026 IJMH

www.themultijournal.com

Received: 15-09-2026

Accepted: 29-09-2026

Publish : 01-10-2026

डॉ० मीनाक्षी कोठारी

विभागाध्यक्ष,

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा विभाग,

द यूनिवर्सिटी ऑफ नार्थ वेस्ट हिमालयाज,

देहरादून, (उत्तराखण्ड)

डॉ० गिरीश पाठक

विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग,

डी. डी. कॉलेज, निम्बुवाला,

देहरादून, (उत्तराखण्ड)

मानव शरीर के उर्ध्वजनुगत विकारों में यौगिक षट्कर्म (नेति क्रिया) एवं आयुर्वेदिक पंचकर्म (नस्य कर्म) की भूमिका

डॉ० मीनाक्षी कोठारी, डॉ० गिरीश पाठक

शोध सारांश -

आधुनिक समय में योग स्वास्थ्य के लिए जितना लाभप्रद है, उतना ही यौगिक क्रियाओं को करने से पूर्व शारीरिक एवं मानसिक रूप से शुद्धिकरण भी आवश्यक है। जिसके लिए शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों अथवा दोषों को बाहर निकालने के लिए योग की प्रथम अवस्था हठ यौगिक ग्रन्थों में वर्णित यौगिक षट्कर्म क्रिया है।

इन षट्कर्मा के अभ्यास से शरीर की शुद्धि होती है। इनका प्रयोजन केवल शरीर की शुद्धि ही नहीं, वरन् आत्म-शुद्धि भी है, क्योंकि शरीर की शुद्धि के साथ-साथ जब हमारे भीतर से विकार दूर होने लगते हैं, तब स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। बिना शुद्धि के शरीर योग के उच्च अभ्यासों के लिए तैयार भी नहीं हो पायेगा। शुद्धि के पश्चात् मनुष्य दीर्घायु हो जाते हैं। षट्कर्म शारीरिक एवं मानसिक रूप से शरीर से दोषों का निर्हरण करते हैं तथा त्रिदोषों (वात, पित्त, कफ) को साम्यावस्था में लाने का भी कार्य करते हैं। षट्कर्म अर्थात् 'छः कर्म' हठयोग में बतायी गयी छः क्रियाएँ हैं। षट्कर्म द्वारा सम्पूर्ण शरीर की शुद्धि होती है एवं देह निरोग रहता है।

उसी प्रकार आयुर्वेद का शाब्दिक अर्थ 'जीवन का विज्ञान' है। आयुर्वेद स्वास्थ्य की एक ऐसी सम्पूर्ण प्रणाली है, जिसका प्राचीन काल से ही पालन किया जा रहा है। आयुर्वेद के अनुसार - केवल बीमारियों से मुक्त होना ही स्वास्थ्य नहीं है बल्कि यह शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सन्तुलन की स्थिति है।

आयुर्वेद की अवधारणा है कि उपचार का मार्ग शरीर और मस्तिष्क में सन्तुलन स्थापित करता है और आयुर्वेदिक उपचार में व्यक्ति की जीवन-शैली तथा आहार-विहार की आदतों को बदलने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है, साथ ही साथ दोषों में सन्तुलन स्थापित करने के लिए शमन (शान्ति) या शोधन चिकित्सा (शुद्धिकरण) की जाती है।

आयुर्वेद के प्राचीन ऋषि आचार्य सुश्रुत ने स्वस्थ व्यक्ति को परिभाषित करते हुए कहा है-

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥¹

अर्थात् जिसके सभी दोष सम मात्रा में हों, अग्नियाँ सम हो, धातु, मल और उनकी क्रियाएँ भी सम (उचित रूप में) हों तथा जिसकी आत्मा, इन्द्रिय और मन प्रसन्न (शुद्ध) हों, उसे ही स्वस्थ व्यक्ति समझना चाहिए।

पंचकर्म, आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित एक विशेष चिकित्सा पद्धति है, जो दोषों को शरीर से बाहर निकाल कर रोगों को जड़ से समाप्त करती है। यह शरीर शोधन की प्रक्रिया है, जो स्वस्थ मनुष्य के लिए भी लाभदायक है।

महर्षि चरक द्वारा चरक संहिता में आयुर्वेदिक पंचकर्म पद्धति का प्रयोजन बताते हुए कहा गया है-

प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्य विकार प्रशमनं च।

आचार्य चरक के अनुसार, स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना एवं आतुर (रोगी) के विकारों (रोग) का पूर्णतः समन (नाश) करना ही पंचकर्म चिकित्सा का प्रमुख उद्देश्य है।

Correspondence:**डॉ० गिरीश पाठक**

विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग,

डी. डी. कॉलेज, निम्बुवाला,

देहरादून, (उत्तराखण्ड)

पंचकर्म अर्थात् पाँच कर्म, आयुर्वेद की उत्कृष्ट चिकित्सा विधि है। पंचकर्म को आयुर्वेद की विशिष्ट चिकित्सा पद्धति कहा जाता है। इस विधि से शरीर में होने वाले शारीरिक एवं मानसिक रोगों और उनके कारणों को दूर करने के लिये विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाएँ प्रयोग में लाई जाती हैं। इसलिए इस अध्ययन का उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि उर्ध्वजत्रुगत विकारों में यौगिक षट्कर्म (नेति क्रिया) एवं आयुर्वेद पंचकर्म (नस्य कर्म) की क्या भूमिका है।

कूट शब्द - उर्ध्वजत्रुगत विकार, यौगिक षट्कर्म (नेति क्रिया), आयुर्वेद पंचकर्म (नस्य कर्म)।

परिचय:-

उर्ध्वजत्रुगत विकार-

उर्ध्वजत्रुगत विकार वे रोग हैं जो गर्दन से ऊपर के हिस्सों को प्रभावित करते हैं। ये मुख्य रूप से सिर, आँखें, कान, नाक, गला, मस्तिष्क एवं समस्त मानसिक रोगों से सम्बन्धित होते हैं। इन विकारों के उपचार में अधिकांश रूप से यौगिक षट्कर्म (नेति क्रिया) एवं आयुर्वेदिक पंचकर्म (नस्य कर्म) जैसी पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों को प्रयोग में लाया जाता है।

यौगिक षट्कर्म:-

घेरण्ड संहिता के अनुसार -

धौतिर्बस्तिस्तथा नेतिः लौलिकी त्राटकं तथा।

कपालभातिश्चैतानि षट्कर्माणि समाचरेत्॥²

इस श्लोक में छः प्रकार की शारीरिक शुद्धिकरण क्रियाओं का उल्लेख किया गया है। जिसमें पहली क्रिया है- 'धौति'। दूसरी क्रिया है- 'वस्ति'। तीसरी क्रिया है- 'नेति', चौथी क्रिया है- 'लौलिकी' (नौलिकी क्रिया), पांचवी क्रिया है- 'त्राटक' एवं अन्तिम छठी क्रिया है- 'कपालभाति'।

इन षट्कर्माँ के प्रयोग से शरीर की शुद्धि होती है तथा दूषित विकारों का नाश भी होता है एवं अच्छे स्वास्थ्य की प्राप्ति भी होती है।

आयुर्वेदिक पंचकर्म:-

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के आठ अंगों में कायचिकित्सा को प्रधानतम माना जाता है और पंचकर्म कायचिकित्सा अर्थात् शरीर की चिकित्सा से सम्बन्धित रोगों में साधन के रूप में योग्य समझा जाने वाला उपाय है।

पंचकर्म का अर्थ:- पंचकर्म में दो शब्द हैं- पंच और कर्म, जिसमें पंच का अर्थ है- पाँच और कर्म का अर्थ है- कार्य; अर्थात् किसी भी कर्तव्य को करने की क्रिया को कर्म कहते हैं।

पंचकर्म की परिभाषा:-

वमन रेचनं नस्यम निरुष्णानुवासनम् ।

एतानि पंचकर्माणि कथितानी मुनिस्वरैः॥³

अर्थात् वमन, विरेचन, नस्य, निरुह (आस्थापन), अनुवासन ये सभी पंचकर्म हैं; जो कि ऋषि मुनियों द्वारा कथित अर्थात् कहा गया है।

पंचकर्म चिकित्सा:-

पंचकर्म चिकित्सा को तीन चरणों में बाँटा गया है। ये तीन कर्म पंचकर्म को सफल बनाते हैं।

(1) पूर्वकर्म (2) प्रधान कर्म (3) पश्चात कर्म

(1) पूर्वकर्म:-

संसोधयस्य पाचन-स्नेहन-स्वेदनानि-पूर्वकर्म।⁴

पंचकर्म द्वारा जिस व्यक्ति का शुद्धिकरण या शोधन करना है, उसकी तैयारी के लिए जो कर्म किया जाता है, उसे पूर्वकर्म कहते हैं।

(i) पाचन:- आहार (भोजन) के ठीक पाचन हेतु तथा जठराग्नि को प्रदीप्त (प्रकाशित) करने वाली औषधियों जैसे- हिंगवाष्टक चूर्ण, चित्रकादी वटी, पंचकोल चूर्ण का उपयोग आहार पाचन हेतु किया जाता है।

(ii) स्नेहन:- इसका प्रयोग बाह्य स्नेहन (अभ्यंग आदि) तथा आभ्यांतर/आंतरिक (स्नेहपान) दोनों प्रकार से किया जाता है। जिससे दोष अपने-अपने स्थान से अलग हो जाते हैं।

स्नेहन के लिए उपयुक्त स्नेह:- घृत, तैल, वसा, मज्जा, उत्तम है।

(iii) स्वेदन:- जिस क्रिया द्वारा शरीर से स्वेद (पसीना) निकाला जाता है, वह स्वेदन कहलाता है तथा स्नेहन के पश्चात् जब दोषों की जटिलता कम हो जाती है उन्हें स्वेदन द्वारा पृथक्-पृथक् कर प्रधान कर्म (वमन, विरेचन, बस्ति) के द्वारा शरीर से बाहर निकाल देते हैं।⁵

(2) प्रधान कर्म:- महर्षि सुश्रुतानुसार, वमन, विरेचन, बस्ति, नस्य और रक्तमोक्षण या महर्षि चरकानुसार, वमन, विरेचन, निरुह व अनुवासन बस्ति और नस्य प्रधान कर्म हैं।

(3) पश्चात् कर्म :- प्रधान कर्म के बाद अग्नि वृद्धि एवं बलवृद्धि हेतु तथा शरीर को प्राकृतिक अवस्था में लाने के लिए किया जाने वाला कार्य पश्चात् कर्म कहलाता है। यह मुख्यतः तीन प्रकार से प्रयोग में लाया जाता है। जैसे - (i) संसर्जन क्रम (ii) रसायन-वाजीकरण चिकित्सा (iii) शमन चिकित्सा।

यौगिक षट्कर्म एवं आयुर्वेदिक पंचकर्म के उद्देश्य:-

षट्कर्म के उद्देश्य -

हठयोग एवं षट्कर्माँ का उद्देश्य दो मुख्य प्राण-प्रवाहों (शरीर में जीवनीशक्ति प्रवाहक) इडा एवं पिंगला नाडी के बीच सामंजस्य स्थापित कर, इनके द्वारा शारीरिक एवं मानसिक शुद्धिकरण एवं सन्तुलन प्राप्त करना।

षट्कर्माँ का प्रयोग शरीर में त्रिदोषों- वात, पित्त और कफ को सन्तुलित करने के लिये भी किया जाता है। आयुर्वेद एवं हठयोग के अनुसार इन त्रिदोषों के बीच असन्तुलन होने से रोग उत्पन्न होता है। शरीर को विषाक्त या दूषित तत्त्वों से मुक्त करने एवं आध्यात्मिक मार्ग पर सुरक्षित रूप से सफलतापूर्वक आगे बढ़ने के लिए भी प्राणायाम एवं उच्च योगाभ्यासों के पूर्व षट्कर्म के अभ्यासों का उपयोग किया जाता है।⁷

'पंचकर्म' का उद्देश्य -

आयुर्वेदिक पंचकर्म चिकित्सा स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा एवं रोगी के रोग को नष्ट करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। आयुर्वेद

चिकित्सा शरीर को स्वस्थ रखने के सिद्धांतों का पालन करने और मनुष्य को रोगमुक्त बनाये रखने के उद्देश्य से एवं रोग-निवारण हेतु रोगी के शरीर को ऋतुचर्या के अनुसार शुद्ध करने की पूर्ण विधि है। रोगी के रोग का सम्पूर्ण निवारण हेतु पंचकर्म को महत्वपूर्ण चिकित्सा कर्म माना गया है।⁸

(I) यौगिक षट्कर्म (नेति क्रिया)⁹ -

घेरण्ड संहिता के षट्कर्म अध्याय में वर्णित नेति क्रिया षट्कर्म के अन्तर्गत आने वाली शुद्धिकरण क्रियाओं में “तीसरी” महत्वपूर्ण क्रिया है। इस क्रिया का मुख्य प्रयोजन - सिर प्रदेश, मस्तिष्क एवं समस्त उर्ध्वभाग की सफाई करना है। नेति क्रिया हमारे शरीर की आन्तरिक नसों या नाड़ियों को संवेदनशील बनाने में अहम भूमिका निभाता है। विभिन्न हठ योगियों का मत है कि हमारी दिव्य दृष्टि या दूर दृष्टि (देखना) से सम्बन्ध रखने वाली नाड़ियों का शुद्धिकरण भी नेति क्रिया द्वारा सम्भव है। नाक के आन्तरिक हिस्सों की सफाई भी नेति क्रिया से होता है। यह बहुत प्रसिद्ध अभ्यास है। हठयोग में दो प्रकार की नेति क्रियाओं का उल्लेख किया गया है - (1) जल नेति एवं (2) सूत्र नेति। जल नेति में जल द्वारा एवं सूत्र नेति में एक सूती कपड़े के धागे की सहायता से इस अभ्यास को किया जाता है। नेति क्रिया में दूध, घी, तैल, एवं मूत्र का उपयोग करने का विधान है। इन दोनों क्रियाओं के बारे में घेरण्ड संहिता के षट्कर्म अध्याय के 50वें श्लोक के माध्यम से हम जान सकेंगे।

वितस्तिमानं सूक्ष्मसूत्रं नासानाले प्रवेशयेत्।

मुखाग्निर्गमयेत्पश्चात् प्रोच्यते नेतिकर्मकम्॥50॥

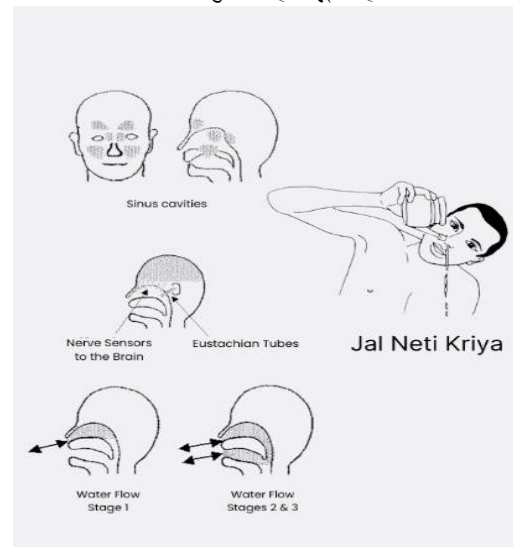
अर्थ - आधे हाथ जितनी लम्बी सूती कपड़े के धागे की एक डोरी (सूत्र) लेकर नाक में डालें और मुँह से बाहर निकाल लें, इसी क्रिया को “नेति क्रिया” कहा जाता है।

व्याख्या - सूत्र नेति को सही ढंग से करने से पहले जल नेति का अभ्यास करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए, इसे पूरी तरह से समझने के लिए, इस क्रिया के उपयुक्त तरीके का ज्ञान होना आवश्यक है। जिसे इस प्रकार से स्पष्ट किया गया है।

(1) जल नेति¹⁰ -

इस अभ्यास क्रिया को करने के लिए उकड़ू होकर बैठना या एड़ियों पर झुककर बैठने की स्थिति या सीधा खड़े होकर करना शामिल है। इस अभ्यास में एक विशेष प्रकार के टोंटी वाले बर्तन (केतली समान बर्तन) को एक आवश्यक उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। सबसे पहले, शरीर के समतुल्य तापमान वाले जल को गर्म कर लेना चाहिये फिर उसमें थोड़ी मात्रा में नमक मिलाया जाना चाहिए। पानी में नमक इसलिए मिलाया जाता है क्योंकि नमकीन पानी को नरम रक्त वाहिकाओं और झिल्लियों में घुलने में नियमित पानी की तुलना में अधिक समय लगता है। इसके अतिरिक्त, सामान्य पानी से नाक में दर्द भी हो सकता है। अब आपको सीधा खड़े होकर या अपनी एड़ियों पर उकड़ू बैठते हुए बर्तन की टोंटी को एक नथुने में रखना चाहिए और अपनी हथेली से बर्तन के नीचे वाले हिस्से को

पकड़ना चाहिए। इसके बाद, अपना मुँह खोलते हुए अपनी गर्दन को विपरीत दिशा में झुकाएं। अगर बर्तन आपकी बाईं तरफ है तो उसे दूसरी तरफ झुकाना चाहिए और अगर वह आपकी दाईं तरफ है तो अपने दाहिने कंधे की तरफ झुकाना चाहिए। परिणामस्वरूप पानी स्वाभाविक रूप से दूसरे नथुने से निकलना शुरू हो जाएगा। इस समय आप अपने मुँह से सांस ले रहे होंगे। ऐसा करते समय नाक से सांस लेना कभी भी उचित नहीं होता। अनुभवहीनता के कारण पहले थोड़ा पानी मुँह में जा सकता है, लेकिन निरन्तर अभ्यास के बाद ऐसा नहीं होगा। एक नथुने से पानी निकालने के बाद, समान प्रक्रिया के लिए दूसरी नाक का उपयोग करना चाहिए। यदि इसके बाद अगर नाक में पानी रह जाए तो एक नथुने को बंद करके दोनों तरफ से बारी-बारी से पानी को बाहर की तरफ छिड़काव छिड़कना चाहिए। नाक को सुखाने के लिए सबसे पहले सीधे खड़े होकर आगे की ओर झुकना चाहिए और अपने सिर को धरती के समानान्तर कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् अंगूठे का उपयोग करके एक नथुने को बंद करते हुए तेजी से सांस लेनी और छोड़नी है। इस अभ्यास के दौरान नाक में बचे हुए पानी को बाहर निकालने पर अधिक ध्यान देना जरूरी है, क्योंकि इस प्रक्रिया में पानी का पूरी तरह से बाहर निकलना अति आवश्यक है। जलनेति को करते हुए समय और आवृत्ति का ध्यान रखना बहुत महत्वपूर्ण है।



चित्र - जल वस्ति

समय एवं आवृत्ति - सामान्य परिस्थितियों में, हर दिन सुबह दोनों नासिका छिद्रों से दस से बीस सेकण्ड की समयावधि के भीतर जलनेति की एक आवृत्ति पूरी हो जानी चाहिए। यदि आपको अपनी नाक से संबंधित कोई बीमारी है, तो आपको अपने योग शिक्षक द्वारा बताई गई सलाह और अपनी स्थिति और क्षमता के आधार पर एक से अधिक बार नेति क्रिया का अभ्यास करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखना होगा।

सावधानियाँ -(1) पानी का तापमान बहुत ज्यादा गर्म या ठण्डा नहीं होना चाहिए।

(2) पानी नमक में पूरी तरह घुल जाना चाहिए।

(3) नाक से पानी छिड़कते समय बहुत ज्यादा शक्ति का इस्तेमाल करने से बचना चाहिए।

(4) यदि नाक से पानी निकालते समय परेशानी हो रही हो या पानी बिल्कुल न निकलने पर होने वाली किसी भी असुविधा का कारण नाक की अनोखी शारीरिक रचना है।

(5) इसके अतिरिक्त, जिन लोगों को गम्भीर नाक सम्बन्धी रोग हैं या लगातार नाक से खून बह रहा है, उन्हें इन दोनों मामलों में एक योग्य योग प्रशिक्षक की सलाह लेनी चाहिए।

जलनेति प्रक्रिया एक सरल और अधिक उपयोग में लायी जाने वाली प्रसिद्ध तकनीक है। जलनेति के बाद सूत्र नेति का अभ्यास करना भी सरल हो जाता है। वैसे तो सिर्फ सूत्र नेति का उल्लेख महर्षि घेरण्ड ने इस श्लोक में किया है, लेकिन सूत्रनेति से पूर्व सहायक क्रिया के रूप में जल नेति का प्रयोग करना ज्यादा उचित समझा जाता है। अब हम सूत्र नेति की कार्यप्रणाली से अवगत होंगे।

जल नेति के लाभ - 'नेति क्रिया' इसका शास्त्रीय नाम है। इसका आधुनिक, वैज्ञानिक नाम है 'ई.एन.टी. केयर' क्रिया। कान, नाक और गले से सम्बद्ध क्रिया। इस क्रिया से गले की भी सफाई होती है, अर्थात् वाणी से सम्बन्धित जो नाड़ियाँ हैं, वे भी उत्तेजित एवं प्रभावित होती हैं। सर्दी-जुकाम के उपचार के लिए इससे बढ़कर कोई सहज और उत्कृष्ट उपाय नहीं है। नेति क्रिया के द्वारा नाक के श्लेष्मा में इकट्ठे और पनपते हुए सभी कीटाणुओं को बाहर निकाला जाता है। यदि सर्दी नहीं भी हुई तो भी नियमित रूप से नेति करने से नाक की चली की सफाई होते रहने के कारण उसमें अधिकाधिक दक्षता बनी रहती है और इस प्रकार शरीर को स्वस्थ रखने में पूर्ण सहायता मिलती है। नाक बन्द रहने पर मुँह से श्वास लेने से भीतर जाने वाली वायु का शुद्धिकरण ठीक से नहीं हो पाता तथा अनेक प्रकार के कीटाणु सीधे फेफड़ों में प्रवेश कर जाते हैं और शरीर को कमजोर बना देते हैं।

(1) 'नेति क्रिया' इसका पारम्परिक नाम है। इसका वैज्ञानिक, आधुनिक नाम 'ई.एन.टी. केयर' क्रिया है, जिसका अर्थ है - नाक, गला और कान। गले को साफ करके यह क्रिया वाणी सम्बन्धी तंत्रिकाओं को भी उत्तेजित और प्रभावित करती है।

(2) सर्दी या खाँसी के इलाज का यह सबसे अच्छा और सुविधाजनक तरीका है।

(3) नेति क्रिया से नाक के बलगम में इकट्ठा होने वाले और पनपने वाले सभी बैक्टीरिया खत्म हो जाते हैं। नियमित रूप से नेति का उपयोग करके, आप अपने नासिका मार्ग को साफ और अधिक कुशल रख सकते हैं, जो सर्दी न होने पर भी समग्र स्वास्थ्य बनाए रखने में मदद करता है।

(4) स्वस्थ आँखें और सुरक्षित दृष्टि बनाए रखने के लिए सबसे अच्छा अभ्यास यही है। जल नेति के माध्यम से प्रवेश करने वाले पानी से दृष्टि से जुड़े अंग और तंत्रिकाएँ प्रभावित होती हैं। जब रक्त उन अंगों के पास पहुंचता है तो रक्त वाहिका की गति में थोड़ी वृद्धि

के कारण नेत्रगोलक को अधिक रक्त प्राप्त होता है। इससे आँखों से गन्दगी साफ करने में सहायता मिलती है।

(5) यह प्रक्रिया अकेले अक्सर आँखों से सम्बन्धित बीमारियों को ठीक करती है। अगर आँख की समस्या शुरूआती चरण में है तो नेति क्रिया इसके उपचार का विकल्प है।

(6) नेति क्रिया के परिणाम स्वरूप कुछ लोगों को सिरदर्द से राहत मिलती है और कई व्यक्तियों की आवाज में स्पष्टता आती है।

(7) नेति क्रिया एलर्जी के लक्षणों को काफी कम करती है। एलर्जी कई अलग-अलग रूपों में आती है। शोधकर्ताओं द्वारा सौ से अधिक एलर्जियों पर अध्ययन किया गया है, जिनमें धूल, धुआँ, कपड़े, पर्यावरण, पंखे और अन्य चीजों से होने वाली एलर्जी शामिल हैं। एलर्जी ब्रोंकाइटिस और अस्थमा सहित श्वसन स्थितियों का एक मुख्य कारण है। नेति क्रिया के अभ्यास से ये रोग भी ठीक हो जाते हैं, किसी अतिरिक्त उपचार की आवश्यकता नहीं होती।

(8) इससे थकान और अनिद्रा से छुटकारा मिलता है। नाक में मौजूद छोटे तन्त्रिका तन्तुओं पर, जो आँखों और कानों की नसों से जुड़े होते हैं, इन सभी पर इसका बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आसानी से साँस लेने से फेफड़े बड़ी मात्रा में स्वच्छ ऑक्सीजन ले पाते हैं, नतीजतन, इस तरह का कोई रोग विकसित नहीं होता और शरीर हमेशा अच्छे स्वास्थ्य में रहता है। इस प्रकार नेति क्रिया दैनिक जीवन में प्रभावी हो सकती है।

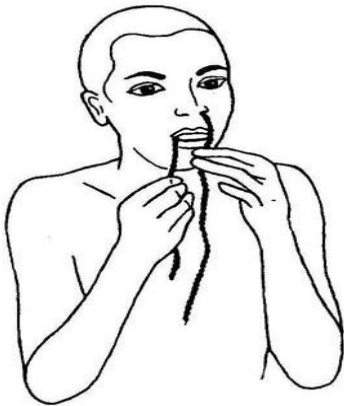
(2) **सूत्र नेति**¹¹ - इस प्रक्रिया की कार्यप्रणाली को समझने से पहले, हमें इसमें शामिल उपकरणों के बारे में पता होना चाहिए। दोनों प्रकार के उपकरणों में से जो भी सबसे सुविधाजनक हो, उसका उपयोग करना सबसे अच्छा है।

(क) **कैथेटर** - यह एक लम्बी, पतली रबर ट्यूब है। आप अपनी नाक के छेद को देखकर इसकी मोटाई का अंदाजा लगा सकते हैं। सामान्य तौर पर, कोई भी व्यक्ति नम्बर 4, 5, या 6 वाले कैथेटर का उपयोग कर सकता है। यह आयुर्वेद की दुकानों में उपलब्ध है।

(ख) **सूत्र** - यह स्वयं निर्मित करना होता है। लगभग 7 से 10 इंच लम्बे सात या आठ सूती महीन धागे लेकर सबके सिरे पकड़कर मोड़ने चाहिए, फिर रस्सी की तरह बटने चाहिए। थोड़ा सा मोम में डुबोकर कड़क होने देना चाहिए। अब इसी प्रकार दूसरे सिरे को भी कड़क बनाना है। सूत्र की मोटाई नासाच्छिद्र के आकार के अनुसार रखनी आवश्यक है, क्योंकि यह प्रत्येक व्यक्ति का भिन्न-भिन्न होता है।

विधि - सूत्र नेति शुरू करने से पहले व्यक्ति को उकड़ू बैठने या खड़े होने की स्थिति में होना चाहिए। सूत्र या कैथेटर की कठोर व पतली नोक को नाक के अन्दर सावधानी से धीरे-धीरे घुमाते हुए डालने का प्रयास करना चाहिये। इसे बलपूर्वक या सीधे डालना बिल्कुल भी सही नहीं है, क्योंकि इससे नासा छिद्रों के छिलने और उनसे खून बहने की संभावना हो सकती है। जब मुँह के पिछले हिस्से में सन्नसनाहट होने लगे तो कैथेटर या सूत्र के मुँह वाले हिस्से को

तर्जनी और मध्यमा उंगलियों की सहायता से खींचा जाना चाहिए। इससे सूत्र या कैथेटर कुछ हद तक नाक में रहेगा और कुछ हद तक मुंह से बाहर रहेगा। इस स्थिति में सूत्र या कैथेटर के दोनों सिरों को पकड़कर धीरे-धीरे से आगे और पीछे रगड़ें। ऐसा पाँच या छः बार करने के बाद सूत्र या कैथेटर को मुंह के जरिए निकालने की सलाह दी जाती है। इसके बाद, विपरीत नासा छिद्र से भी यही प्रक्रिया दोहरानी चाहिए। इसके बाद फिर से जल नेति अवश्य करनी चाहिए, जिससे नाक से सारी गन्दगी साफ हो जाएगी। अगर इसे करने के बाद आपकी नाक सूखी लगने लगती है, तो आपको दूध या गाय के घी का इस्तेमाल करके नेति क्रिया करनी चाहिए, जिससे आपकी नाक कोमल व स्निग्ध (चिकनी) हो जाएगी। इस क्रिया में समय एवं आवृत्ति के साथ-साथ कुछ महत्वपूर्ण सावधानियों का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।



चित्र - सूत्र नेति

समय एवं आवृत्ति - सूत्र नेति शुरू में चुनौतीपूर्ण हो सकती है, क्योंकि श्लेष्म झिल्ली और नाड़ियों को मजबूत होने में समय लगता है। सप्ताह में एक बार, सूत्र को सुबह खाली पेट किया जाना चाहिए। इसे अधिकतम 14 बार अन्दर और बाहर किया जाना चाहिए, इससे अधिक नहीं। इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य सावधानियों का पालन करने की आवश्यकता है।

सावधानियाँ - (1) सूत्र को जबरदस्ती अंदर डालने की कोशिश नहीं करनी चाहिए, धीरे-धीरे घुमाकर सावधानी से अन्दर डालना चाहिए। इस अभ्यास की पहली बार शुरूआत करते समय या नाक से खून आने की शिकायत करने वाले व्यक्तियों को योग्य योग शिक्षक के निर्देशानुसार ही इस अभ्यास को करना चाहिए।

(2) जल नेति क्रिया को सूत्र नेति से पहले व बाद में करना आवश्यक है।

(3) सूत्र या कैथेटर का उपयोग करने से पहले उसे गर्म पानी में उबालकर, धोकर और उसके बाद सुखाकर प्रयोग में लाना चाहिए। इस क्रिया को सम्पन्न करने के बाद भी सूत्र एवं कैथेटर को संभालकर रखने के लिए इसी तरीके का प्रयोग करना चाहिए।

सूत्र नेति के लाभ - (1) सूत्र नेति श्लेष्म झिल्ली की अच्छी तरह से मालिश करती है, और उसकी गतिशीलता को बढ़ाती है एवं रक्त

प्रवाह को भी तेज करती है, ताकि नासिका को पर्याप्त रक्त प्राप्त हो सके।

(2) चिकना कैथेटर या सूती धागा साइनस ग्रन्थियों के अन्दर घर्षण पैदा करता है, जो उन पर दबाव डालता है और उनकी सूजन को कम करता है। यदि हड्डी की वृद्धि होती है, तो सूत्र नेति घर्षण भी पैदा करती है, जिससे हड्डी की वृद्धि धीमी हो जाती है। इस प्रकार, इसका अभ्यास साइनस, राइनाइटिस या हड्डी की वृद्धि के मामलों में राहत प्रदान करता है।

(3) नेति क्रिया से मस्तिष्क शान्त होता है। नेति क्रिया के परिणाम स्वरूप तनाव और सुस्ती दूर होती है। नेति क्रिया उन स्थितियों में भी सहायक होती है जब मिर्गी हो या मस्तिष्क में उत्तेजना या गर्मी हो।

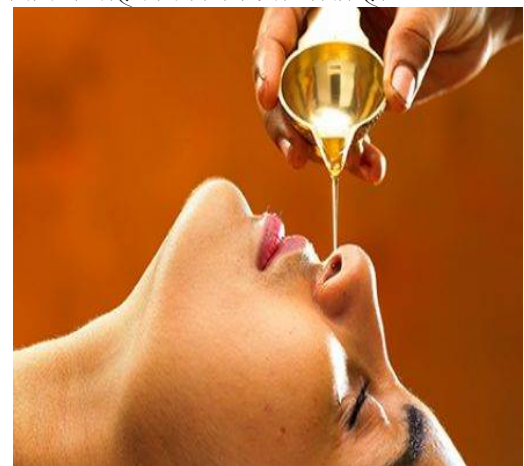
(4) मुख्य रूप से नेति क्रिया के अभ्यास से कफ दोषों का नाश होता है।

(II) आयुर्वेद पंचकर्म (नस्य कर्म)-

(1) सामान्य परिचय¹² - 'नस्यकर्म' पंचकर्म चिकित्सा के प्रमुख पाँच कर्मों में पाँचवां शुद्धि चिकित्सा कर्म है। इसे 'शिरोविरेचन', 'नावन', 'नस्तःकर्म', 'मूर्धविरेचन' के नाम से भी जाना जाता है।

नस्यकर्म का विशेष रूप से गर्दन के ऊपर या सिर सम्बन्धी रोगों के उपचार में उपयोग किए जाने का दावा किया जाता है। सिर "सर्वश्रेष्ठ अंग" है और वह स्थान है जहाँ मस्तिष्क, पाँच इन्द्रियाँ और उच्च जीवन शक्ति स्रोत निर्भर हैं। क्योंकि नासिका श्रोत मस्तिष्क को एक श्रोत मार्ग से सीधा जोड़ता है, नाक को सिर का प्रवेश द्वार माना जाता है। नतीजतन, नाक द्वारा प्रविष्ट की जाने वाली औषधी तेजी से मस्तिष्क में प्रवेश करती है और सिर के हर हिस्से को प्रभावित करती है। इसलिए इसे सिर क्षेत्र को प्रभावित करने वाले रोगों के लिए सर्वोत्तम चिकित्सा माना जाता है।

नस्यकर्म के अन्तर्गत औषधियों को चूर्ण, द्रव, स्नेह आदि के रूप में नासिका मार्ग से दिया जाता है, तथा प्रकुपित दोषों को नासामार्ग के द्वारा शरीर से बाहर निकाल दिया जाता है।



चित्र - नस्यदान विधि

(2) नस्य शब्द की निरुक्ति - अरुणदत्त ने नस्य को "नासायां भवं नस्यम्" कहा है।

भावप्रकाश ग्रन्थ में “नासाग्राह्य” औषधि को नस्य कहा गया है। नस्य धातु गति को संदर्भित करता है और इसे व्याप्त होने के अर्थ में प्रयोग में लाया जाता है।

नस्य - नासिकायां - नासिका के अर्थ में भी प्रायोगिक है।

(3) नस्य का अर्थ:- जो नासिका (नाक) के लिए लाभदायक है।

नस्तः यह शब्द नस्य धातु से संज्ञा वाचक हो जाता है जिसका अर्थ भी नस्य कर्म है।

(4) परिभाषा:- “औषधम् औषध सिद्धं स्नेहो वा नासिकाभाम्यां दीयते इति नस्यम्”¹³

औषधि अथवा औषध सिद्ध (प्राप्त किया हुआ) स्नेहों को नासामार्ग से दिया जाना नस्य कहलाता है।

जिस औषधि को सूक्ष्मचूर्ण अथवा द्रव के रूप में नाक के छिद्रों में सुँघाया या टपकाया जाता है, उसे नस्य कहते हैं।

(5) नस्य कर्म की उपयोगिता एवं लाभ:-

(क) नस्यकर्म स्नेहन, शोधन, विरेचन, स्तम्भन, तर्पण, शमन, आकर्षण, बृहण, संज्ञाप्रबोधन आदि कार्य करता है।

(ख) आँख, सूँघने की इन्द्रियाँ या नाक एवं श्रोत (कर्ण या कान) सम्बन्धी रोगों से बचाव होता है।

(ग) बाल जल्दी नहीं गिरते एवं इनकी स्वाभाविक वृद्धि विशेष रूप से होती है।

(घ) पीनस (सर्दी या जुकाम), अर्धावभेदक (अधकपारी या माइग्रेन), शिरःशूल, मन्यास्तम्भ (गर्दन में अकड़न, कठोर गर्दन), अर्दित (एक बात रोग जिसमें मुँह, गर्दन और आँखें टेढ़ी हो जाती हैं) एवं हनुग्रह (एक रोग जिसमें जबड़े बैठ जाते हैं और जल्दी खुलते नहीं) आदि रोगों का शीघ्रता से नाश होता है।

(ङ) शिर की अस्थियों, स्नायु (ligament), एवं सन्धियों (जोड़ या joints) का बल बढ़ता है।

(च) इन्द्रियों की शक्ति बढ़ती है।

(छ) उर्ध्वजत्रुगत (गर्दन से ऊपर) रोग उत्पन्न नहीं होते।

(ज) अकाल - वृद्धावस्था नहीं आती।

(झ) हनु (जबड़ा), दन्त, शिर, बाहु (भुजा, बाँह) तथा उरःप्रदेश (छाती या सीना) के अवयवों में बल की प्राप्ति होती है।

(ञ) खालित्य, पालित्य (बालों का कुछ पीलापन लिये सफेद होना) रोग नहीं होते।

इस प्रकार से नस्य कर्म शिर एवं गर्दन से ऊपर के अंगों के स्वास्थ्य की रक्षा, बल की वृद्धि, दोषों का शुद्धिकरण एवं रोगों के शमन हेतु अत्यंत उपयोगी माना जाता है।

निष्कर्ष -

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से यह कहा जा सकता है कि समस्त यौगिक ग्रन्थों - हठप्रदीपिका, घेरण्ड संहिता, उपनिषदों में वर्णित षट्कर्म क्रियाओं द्वारा शरीर के उर्ध्वजत्रुगत एवं मानसिक विकारों को शुद्ध करके उन्हें सन्तुलित अवस्था में लाया जा सकता है तथा

शरीर को रोग मुक्त रखकर दिर्घायु की प्राप्ति की जा सकती है। षट्कर्म एवं पंचकर्म के उपयोग से समस्त उर्ध्वजत्रुगत विकारों का समूल नाश होने के साथ-साथ शरीर में ऊर्जा, बल, रोग प्रतिरोधक क्षमता की भी वृद्धि होती है। इसलिए भौतिक शरीर की शुद्धि के लिए षट्कर्म एवं पंचकर्म क्रियाओं का निरन्तर उपयोग अत्यन्त लाभकारी है। इसी के साथ इस साहित्यिक समीक्षा से यह पता चला कि प्रशिक्षित गुरु के मार्गदर्शन में षट्कर्म एवं पंचकर्म क्रियाओं का प्रयोग करना सुरक्षित होता है और स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने और शरीर को रोगमुक्त रखने में इन प्रक्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तथा उपर्युक्त समीक्षा से यह भी स्पष्ट होता है कि प्राचीन योग व आयुर्विज्ञान की शोधन या शुद्धिकरण क्रियाएँ षट्कर्म एवं पंचकर्म हैं। इनका सिद्धान्त शोधन व शमन पर आधारित है, इनका उद्देश्य जीवन में स्वास्थ्य, सन्तुलन व साम्यावस्था स्थापित करना है।

सन्दर्भ सूची -

1. शास्त्री, कविराज डॉ० अम्बिका दत्त ए. एम. एस., मेहता, प्राणजीवन माणिकचन्द, सुश्रुतसंहिता, सूत्र स्थानम्, अध्याय - 15, श्लोक संख्या - 48, पृष्ठ संख्या - 64
2. सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द - घेरण्ड संहिता; बिहार योग भारती द्वारा संस्करण 2011, अध्याय - 1 (षट्कर्म प्रकरण), श्लोक संख्या - 12, पृष्ठ संख्या - 23; योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गंगा दर्शन, मुंगेर, बिहार, भारत।
3. शारंगधर संहिता (उत्तर खण्ड) - 8/63
4. सुश्रुत संहिता - सूत्र स्थान (डलहण टीका) - 5/3
5. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार - कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 1, पृष्ठ संख्या - 1, 2, 9, 10, 11, 12; चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी।
6. शुक्ल, डॉ० विद्याधर, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), पुनर्मुद्रित संस्करण 2010, अध्याय - 1 (विषय प्रवेश विज्ञान), पृष्ठ संख्या - 10
7. सरस्वती, स्वामी सत्यानन्द - आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध; चतुर्थ संशोधित संस्करण 2015, अध्याय -8 (षट्कर्म), पृष्ठ संख्या - 524, 525; योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत।
8. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार - कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग); संस्करण - 2014, अध्याय - 1 (कायचिकित्सा: पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 4; चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी।
9. सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द, घेरण्ड संहिता, 2011, अध्याय - 1 (षट्कर्म प्रकरण), श्लोक संख्या - 50, पृष्ठ संख्या - 88
10. सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द, घेरण्ड संहिता, 2011, अध्याय - 1 (षट्कर्म प्रकरण), पृष्ठ संख्या - 88-92
11. सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द, घेरण्ड संहिता, 2011, अध्याय - 1 (षट्कर्म प्रकरण), पृष्ठ संख्या - 93-96
12. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 7 (नस्य कर्म), पृष्ठ संख्या - 250-269
13. सुश्रुत संहिता, चिकित्सा स्थान, अध्याय - 40/21